श्री साई चालीसा

"पहले साई के चरणों में, अपना शीश नमाऊं मैं।

कैसे शिर्डी साई आए, सारा हाल सुनाऊं मैं" ॥१॥

"कौन हैं माता, पिता कौन हैं, यह न किसी ने भी जाना।

कहां जनम साई ने धारा, प्रश्न पहेली रहा बना" ॥२॥

"कोई कहे अयोध्या के ये, रामचन्द्र भगवान हैं।

कोई कहता साईबाबा, पवन-पुत्र हनुमान हैं" ॥३॥

"कोई कहता मंगल मूर्ति, श्री गजानन हैं साई।

कोई कहता गोकुल-मोहन, देवकी नन्दन हैं साई" ॥४॥

"शंकर समझ भक्त कई तो, बाबा को भजते रहते।

कोई कह अवतार दत्त का, पूजा साई की करते" ॥५॥

"कुछ भी मानो उनको तुम, पर साई हैं सच्चे भगवान।

बड़े दयालु, दीनबन्धु, कितनों को दिया है जीवन दान" ॥६॥

"कई वर्ष पहले की घटना, तुम्हें सुनाऊंगा मैं बात।

किसी भाग्यशाली की, शिर्डी में आई थी बारात" ॥७॥

"आया साथ उसी के था, बालक एक बहुत सुन्दर।

आया, आकर वहीं बस गया, पावन शिर्डी किया नगर" ॥८॥

"कई दिनों तक रहा भटकता, भिक्षा मांगी उसने दर-दर।

और दिखाई ऐसी लीला, जग में जो हो गई अमर" ॥९॥

"जैसे-जैसे उमर बढ़ी, वैसे ही बढ़ती गई शान।

घर-घर होने लगा नगर में, साई बाबा का गुणगान" ॥१०॥

"दिग्-दिगन्त में लगा गूंजने, फिर तो साईजी का नाम।

दीन-दुखी की रक्षा करना, यही रहा बाबा का काम" ॥११॥

"बाबा के चरणों में जाकर, जो कहता मैं हूं निर्धन।

दया उसी पर होती उनकी, खुल जाते दु:ख के बन्धन" ॥१२॥

"कभी किसी ने मांगी भिक्षा, दो बाबा मुझको सन्तान।

शिर्डी साई बाबा चालीसा एवं अस्तु तब कहकर साई, देते थे उसको वरदान" ॥१३॥

"स्वयं दु:खी बाबा हो जाते, दीन-दुखी जन का लख हाल।

अन्त: करण श्री साई का, सागर जैसा रहा विशाल" ॥१४॥

"भक्त एक मद्रासी आया, घर का बहुत बड़ा धनवान।

माल खजाना बेहद उसका, केवल नहीं रही सन्तान" ॥१५॥

"लगा मनाने साई नाथ को, बाबा मुझ पर दया करो।

झंझा से झंकृत नैया को, तुम ही मेरी पार करो" ॥१६॥

"कुलदीपक के अभाव में, व्यर्थ है दौलत की माया।

आज भिखारी बन कर बाबा, शरण तुम्हारी मैं आया" ॥१७॥

"दे दो मुझको पुत्र दान, मैं ऋणी रहूंगा जीवन भर।

और किसी की आस न मुझको, सिर्फ़ भरोसा है तुम पर" ॥१८॥

"अनुनय-विनय बहुत की उसने, चरणों में धर के शीश।

तब प्रसन्न होकर बाबा ने, दिया भक्त को यह आशीष" ॥१९॥

`"अल्लाह भला करेगा तेरा`, पुत्र जन्म हो तेरे घर।

कृपा होगी तुम पर उसकी, और तेरे उस बालक पर" ॥२०॥

"अब तक नही किसी ने पाया, साई की कृपा का पार।

पुत्र रत्न दे मद्रासी को, धन्य किया उसका संसार" ॥२१॥

"शिर्डी साई बाबा चालीसा तन-मन से जो भजे उसी का, जग में होता है उद्धार।

"सांच को आंच नहीं है कोई, सदा झूठ की होती हार" ॥२२॥

"मैं हूं सदा सहारे उसके, सदा रहूंगा उसका दास।
"साई जैसा प्रभु मिला है, इतनी ही कम है क्या आस" ॥२३॥

"मेरा भी दिन था इक ऐसा, मिलती नहीं मुझे थी रोटी।
"तन पर कपड़ा दूर रहा था, शेष रही नन्हीं सी लंगोटी" ॥२४॥

"सरिता सन्मुख होने पर भी मैं प्यासा का प्यासा था।
दुर्दिन मेरा मेरे ऊपर, दावाग्नि बरसाता था" ॥२५॥

"धरती के अतिरिक्त जगत में, मेरा कुछ अवलम्ब न था।
बना भिखारी मैं दुनिया में, दर-दर ठोकर खाता था" ॥२६॥

"ऐसे में इक मित्र मिला जो, परम भक्त साई का था।
जंजालों से मुक्त मगर इस, जगती में वह मुझ-सा था" ॥२७॥

"बाबा के दर्शन की खातिर, मिल दोनों ने किया विचार।
साई जैसे दया-मूर्ति के, दर्शन को हो गए तैयार" ॥२८॥

"शिर्डी साई बाबा चालीसा पावन शिर्डी नगरी में जाकर, देखी मतवाली मूर्ति।
धन्य जन्म हो गया कि हमने, जब देखी साई की सूरति" ॥२९॥

"जबसे किए हैं दर्शन हमने, दु:ख सारा काफूर हो गया।
संकट सारे मिटे और, विपदाओं का अन्त हो गया" ॥३०॥

"मान और सम्मान मिला, भिक्षा में हमको बाबा से।
प्रतिबिम्बित हो उठे जगत में, हम साई की आभा से" ॥३१॥

"बाबा ने सम्मान दिया है, मान दिया इस जीवन में।
इसका ही सम्बल ले मैं, हंसता जाऊंगा जीवन में" ॥३२॥

"साई की लीला का मेरे, मन पर ऐसा असर हुआ।
लगता जगती के कण-कण में, जैसे हो वह भरा हुआ" ॥३३॥

“काशीराम” बाबा का भक्त, इस शिर्डी में रहता था।
मैं साई का साई मेरा, वह दुनिया से कहता था" ॥३४॥

"सीकर स्वयं वस्त्र बेचता, ग्राम नगर बाजारों में।
झंकृत उसकी हृद तन्त्री थी, साई की झंकारों में" ॥३५॥

"स्तब्ध निशा थी, थे सोये, रजनी आंचल में चांद-सितारे।
नहीं सूझता रहा हाथ को हाथ तिमिर के मारे" ॥३६॥

"वस्त्र बेचकर लौट रहा था, हाय! हाट से “काशी” ।

विचित्र बड़ा संयोग कि उस दिन, आता था वह एकाकी" ॥३७॥

"घेर राह में खड़े हो गए, उसे कुटिल, अन्यायी ।

मारो काटो लूटो इस की ही ध्वनि पड़ी सुनाई" ॥३८॥

"लूट पीट कर उसे वहां से, कुटिल गये चम्पत हो ।

आघातों से ,मर्माहत हो, उसने दी संज्ञा खो" ॥३९॥

"बहुत देर तक पड़ा रहा वह, वहीं उसी हालत में ।

जाने कब कुछ होश हो उठा, उसको किसी पलक में" ॥४०॥

"अनजाने ही उसके मुंह से, निकल पड़ा था साई ।

जिसकी प्रतिध्वनि शिर्डी में, बाबा को पड़ी सुनाई" ॥४१॥

"क्षुब्ध उठा हो मानस उनका, बाबा गए विकल हो ।

लगता जैसे घटना सारी, घटी उन्हीं के सम्मुख हो" ॥४२॥

"उन्मादी से इधर-उधर, तब बाबा लगे भटकने ।

सम्मुख चीजें जो भी आई, उनको लगे पटकने" ॥४३॥

"और धधकते अंगारों में, बाबा ने अपना कर डाला ।

हुए सशंकित सभी वहां, लख ताण्डव नृत्य निराला" ॥४४॥

"समझ गए सब लोग कि कोई, भक्त पड़ा संकट में।
क्षुभित खड़े थे सभी वहां पर, पड़े हुए विस्मय में" ॥४५॥

"उसे बचाने के ही खातिर, बाबा आज विकल हैं।
उसकी ही पीड़ा से पीड़ित, उनका अन्त:स्थल है" ॥४६॥

"इतने में ही विधि ने अपनी, विचित्रता दिखलाई।
लख कर जिसको जनता की, श्रद्धा-सरिता लहराई" ॥४७॥

"लेकर कर संज्ञाहीन भक्त को, गाड़ी एक वहां आई।
सम्मुख अपने देख भक्त को, साई की आंखें भर आईं" ॥४८॥

"शान्त, धीर, गम्भीर सिन्धु-सा, बाबा का अन्त:स्थल।
आज न जाने क्यों रह-रह कर, हो जाता था चंचल" ॥४९॥

"आज दया की मूर्ति स्वयं था, बना हुआ उपचारी।
और भक्त के लिए आज था, देव बना प्रतिहारी" ॥५०॥

"आज भक्ति की विषम परीक्षा में, सफल हुआ था काशी।
उसके ही दर्शन के खातिर, थे उमड़े नगर-निवासी" ॥५१॥

"जब भी और जहां भी कोई, भक्त पड़े संकट में।

उसकी रक्षा करने बाबा, आते हैं पलभर में" ॥७२॥

"युग-युग का है सत्य यह, नहीं कोई नई कहानी।

आपातग्रस्त भक्त जब होता, आते खुद अन्तर्यामी" ॥७३॥

"भेद-भाव से परे पुजारी, मानवता के थे साई।

जितने प्यारे हिन्दु-मुस्लिम, उतने ही थे सिक्ख ईसाई" ॥७४॥

"भेद-भाव मन्दिर-मस्जिद का, तोड़-फोड़ बाबा ने डाला।

राम-रहीम सभी उनके थे, कृष्ण-करीम-अल्लाहताला" ॥७५॥

"घण्टे की प्रतिध्वनि से गूंजा, मस्जिद का कोना-कोना।

मिले परस्पर हिन्दू-मुस्लिम, प्यार बढ़ा दिन-दिन दूना" ॥७६॥

"चमत्कार था कितना सुंदर, परिचय इस काया ने दी।

और नीम कड़ुवाहट में भी, मिठास बाबा ने भर दी" ॥७७॥

"सबको स्नेह दिया साई ने, सबको सन्तुल प्यार किया।

जो कुछ जिसने भी चाहा, बाबा ने उनको वही दिया" ॥७८॥

"ऐसे स्नेह शील भाजन का, नाम सदा जो जपा करे।

पर्वत जैसा दु:ख न क्यों हो, पलभर में वह दूर टरे" ॥७९॥

"साई जैसा दाता हमने, अरे नहीं देखा कोई।

जिसके केवल दर्शन से ही, सारी विपदा दूर हो गई" ॥६०॥

"तन में साई, मन में साई, साई-साई भजा करो।

अपने तन की सुधि-बुधि खोकर, सुधि उसकी तुम किया करो" ॥६१॥

"जब तू अपनी सुधि तज, बाबा की सुधि किया करेगा।

और रात-दिन बाबा, बाबा ही तू रटा करेगा" ॥६२॥

"तो बाबा को अरे! विवश हो, सुधि तेरी लेनी ही होगी।

तेरी हर इच्छा बाबा को, पूरी ही करनी होगी" ॥६३॥

"जंगल-जंगल भटक न पागल, और ढूंढ़ने बाबा को।

एक जगह केवल शिर्डी में, तू पायेगा बाबा को" ॥६४॥

"धन्य जगत में प्राणी है वह, जिसने बाबा को पाया।

दु:ख में सुख में प्रहर आठ हो, साई का ही गुण गाया" ॥६५॥

"गिरें संकटों के पर्वत, चाहे बिजली ही टूट पड़े।

साई का ले नाम सदा तुम, सम्मुख सब के रहो अड़े" ॥६६॥

"इस बूढ़े की करामात सुन, तुम हो जाओगे हैरान।
दंग रह गये सुनकर जिसको, जाने कितने चतुर सुजान" ॥६७॥

"एक बार शिर्डी में साधू, ढ़ोंगी था कोई आया।
भोली-भाली नगर-निवासी, जनता को था भरमाया" ॥६८॥

"जड़ी-बूटियां उन्हें दिखाकर, करने लगा वहां भाषण।
कहने लगा सुनो श्रोतागण, घर मेरा है वृन्दावन" ॥६९॥

"औषधि मेरे पास एक है, और अजब इसमें शक्ति।
इसके सेवन करने से ही, हो जाती दुःख से मुक्ति" ॥७०॥

"अगर मुक्त होना चाहो तुम, संकट से बीमारी से।
तो है मेरा नम्र निवेदन, हर नर से हर नारी से" ॥७१॥

"लो खरीद तुम इसको इसकी, सेवन विधियां हैं न्यारी।
यद्यपि तुच्छ वस्तु है यह, गुण उसके हैं अति भारी" ॥७२॥

"जो है संतति हीन यहां यदि, मेरी औषधि को खायें।
पुत्र-रत्न हो प्राप्त, अरे वह मुंह मांगा फल पायें" ॥७३॥

"औषधि मेरी जो न खरीदे, जीवन भर पछतायेगा।

मुझ जैसा प्राणी शायद ही, अरे यहां आ पायेगा" ॥७४॥

"दुनियां दो दिन का मेला है, मौज शौक तुम भी कर लो।

गर इससे मिलता है, सब कुछ, तुम भी इसको ले लो" ॥७५॥

"हैरानी बढ़ती जनता की, लख इसकी कारस्तानी।

प्रमुदित वह भी मन ही मन था, लख लोगो की नादानी" ॥७६॥

"खबर सुनाने बाबा को यह, गया दौड़कर सेवक एक।

सुनकर भृकुटि तनी और, विस्मरण हो गया सभी विवेक" ॥७७॥

"हुक्म दिया सेवक को, सत्वर पकड़ दुष्ट को लाओ।

या शिर्डी की सीमा से, कपटी को दूर भगाओ" ॥७८॥

"मेरे रहते भोली-भाली, शिर्डी की जनता को।

कौन नीच ऐसा जो, साहस करता है छलने को" ॥७९॥

"पल भर में ही ऐसे ढ़ोंगी, कपटी नीच लुटेरे को।

महानाश के महागर्त में, पहुंचा दूं जीवन भर को" ॥८०॥

"तनिक मिला आभास मदारी क्रूर कुटिल अन्यायी को।

काल नाचता है अब सिर पर, गुस्सा आया साई को" ॥८१॥

"पल भर में सब खेल बन्द कर, भागा सिर पर रखकर पैर।

सोच था मन ही मन, भगवान नहीं है अब खैर" ॥८२॥

"सच है साई जैसा दानी, मिल न सकेगा जग में।

अंश ईश का साईबाबा, उन्हें न कुछ भी मुश्किल जग में" ॥८३॥

"स्नेह, शील, सौजन्य आदि का, आभूषण धारण कर।

बढ़ता इस दुनिया में जो भी, मानव-सेवा के पथ पर" ॥८४॥

"वही जीत लेता है जगती के, जन-जन का अन्त:स्थल।

उसकी एक उदासी ही जग को कर देती है विह्वल" ॥८५॥

"जब-जब जग में भार पाप का, बढ़ बढ़ ही जाता है।

उसे मिटाने के ही खातिर, अवतारी ही आता है" ॥८६॥

"पाप और अन्याय सभी कुछ, इस जगती का हर के।

दूर भगा देता दुनिया के, दानव को क्षण भर में" ॥८७॥

"स्नेह सुधा की धार बरसने, लगती है इस दुनिया में।

गले परस्पर मिलने लगते, हैं जन-जन आपस में" ॥८८॥

"ऐसे ही अवतारी साई, मृत्युलोक में आकर।

समता का यह पाठ पढ़ाया, सबको अपना आप मिटाकर" ॥८९॥

"नाम द्वारका मस्जिद का, रक्खा शिर्डी में साई ने।

दाप, ताप, सन्ताप मिटाया, जो कुछ आया साई ने" ॥९०॥

"सदा याद में मस्त राम की, बैठे रहते थे साई।

पहर आठ ही राम नाम का, भजते रहते थे साई" ॥९१॥

"सूखी-रूखी, ताजी-बासी, चाहे या होवे पकवान।

सदा प्यार के भूखे साई की, खातिर थे सभी समान" ॥९२॥

"स्नेह और श्रद्धा से अपनी, जन जो कुछ दे जाते थे।

बड़े चाव से उस भोजन को, बाबा पावन करते थे" ॥९३॥

"कभी-कभी मन बहलाने को, बाबा बाग में जाते थे।

प्रमुदित मन निरख प्रकृति, छटा को वे होते थे" ॥९४॥

"रंग-बिरंगे पुष्प बाग के, मन्द-मन्द हिल-डुल करके।

बीहड़ वीराने मन में भी, स्नेह सलिल भर जाते थे" ॥९५॥

"ऐसी सुमधुर बेला में भी, दु:ख आपात विपदा के मारे।

अपने मन की व्यथा सुनाने, जन रहते बाबा को घेरे" ॥९६॥

"सुनकर जिनकी करूण कथा को, नयन कमल भर आते थे।

दे विभूति हर व्यथा,शान्ति, उनके उर में भर देते थे" ॥९७॥

"जाने क्या अद्भुत,शक्ति, उस विभूति में होती थी।

जो धारण करते मस्तक पर, दु:ख सारा हर लेती थी" ॥९८॥

"धन्य मनुज वे साक्षात् दर्शन, जो बाबा साई के पाये।

धन्य कमल-कर उनके जिनसे, चरण-कमल वे परसाये" ॥९९॥

"काश निर्भय तुमको भी, साक्षात साई मिल जाता।

बरसों से उजड़ा चमन अपना, फिर से आज खिल जाता" ॥१००॥

"गर पकड़ता मैं चरण श्री के, नहीं छोड़ता उम्रभर।

मना लेता मैं जरूर उनको, गर रूठते साई मुझ पर" ॥१०१॥